॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नमः ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

श्री पाण्डव गीता

श्री पाण्डव गीता

श्री प्रभु के चरणकमलों में समर्पित:

श्री मनीष त्यागी
संस्थापक एवं अध्यक्ष
श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥

॥ श्री हरिः ॥

॥ पाण्डव गीता ॥

प्रह्लादनारदपराशरपुण्डरीकव्यासाम्बरीषशुकशौनकभीष्मकाव्याः ।
रुक्माङ्गदार्जुनवसिष्ठविभीषणाद्या एतानहं परमभागवतान् नमामि
॥१॥

पाण्डवों ने कहा – प्रह्लाद, नारद, पराशर, पुण्डरीक, व्यास, अम्बरीष, शुकदेव, शौनक, भीष्म, दाल्भ्य, रुक्माङ्गद, अर्जुन (सहस्रार्जुन), वसिष्ठ और विभीषण आदि – इन पुण्य प्रदान करनेवाले परम भक्तोंको हम नमस्कार करते हैं॥१॥

लोमहर्षण उवाच ।

धर्मो विवर्धति युधिष्ठिरकीर्तनेन पापं प्रणश्यति वृकोदरकीर्तनेन ।
शत्रुर्विनश्यति धनञ्जयकीर्तनेन माद्रीसुतौ कथयतां न भवन्ति रोगाः
॥२॥

लोमहर्षण ने कहा – युधिष्ठिरके (नाम, गुण, लीला और धामका) कीर्तन करनेसे धर्मको वृद्धि होती है, (इसी प्रकार) भीमसेनके कीर्तनसे सारे पाप नष्ट हो जाते हैं, अर्जुनके कीर्तनसे शत्रुओंका नाश

होता है और माद्रीपुत्र नकुल तथा सहदेवके कीर्तनसे रोग नहीं होते॥२॥

ब्रह्मोवाच ।

ये मानवा विगतरागपराऽपरज्ञा नारायणं सुरगुरुं सततं स्मरन्ति ।
ध्यानेन तेन हतकिल्बिष चेतनास्ते मातुः पयोधररसं न पुनः पिबन्ति
॥ ३॥

ब्रह्माजी ने कहा – जो मनुष्य रागसे रहित होकर पर (परब्रह्म) और अपर (अपरब्रह्म) तत्त्वको जानकर देवताओंके उद्भावक नारायणका निरन्तर स्मरण करते रहते हैं और भगवान्‌के ध्यानसे अपने अन्तःकरणके मलको धो चुके हैं, वे फिर माताका दूध नहीं पीते अर्थात् उनका फिर जन्म नहीं होता, वे मुक्त हो जाते हैं॥३॥

इन्द्र उवाच ।
नारायणो नाम नरो नराणां प्रसिद्धचौरः कथितः पृथिव्याम् ।
अनेकजन्मार्जितपापसञ्चयं हरत्यशेषं स्मृतमात्र एव यः ॥ ४॥

इन्द्र ने कहा – पृथ्वीपर मनुष्योंमें नररूपसे अवतरित भगवान् नारायण चौर' रूपसे विख्यात हैं। भगवान्‌को 'चौर' इसलिये कहा गया है। कि ये (मनुष्यके द्वारा) अनेक जन्मों में कमाये गये पापसमूहका स्मरण करते ही निःशेष हरण कर लेते हैं अर्थात् कोई चोर चुराते समय कुछ तो छोड़ता है, किंतु भगवान् उसके पापके

एक कणको भी नहीं छोड़ते अर्थात् पापको जड़से समाप्त कर देते हैं॥४॥

युधिष्ठिर उवाच ।

मेघश्यामं पीतकौशेयवासं श्रीवत्साङ्कं कौस्तुभोद्भासिताङ्गम् ।
पुण्योपेतं पुण्डरीकायताक्षं विष्णुं वन्दे सर्वलोकैकनाथम् ॥ ५॥

युधिष्ठिर ने कहा – मैं सभी लोकोंके एकमात्र स्वामी भगवान् विष्णुको वन्दना करता हैं, जो मेघकी तरह श्याम वर्णवाले हैं, पीले रेशमी वस्त्र पहने हुए हैं। उनका वक्षःस्थल श्रीवत्ससे चिह्नित है तथा कौस्तुभमणिकी प्रभासे सारे अङ्ग देदीप्यमान हैं। वे पुण्यस्वरूप हैं और उनके नेत्र कमलकी तरह विशाल हैं।॥५॥

भीम उवाच ।

जलौघमग्ना सचराऽचरा धरा विषाणकोट्याऽखिलविश्वमूर्तिना ।
समुद्धृता येन वराहरूपिणा स मे स्वयम्भूर्भगवान् प्रसीदरु ॥ ६॥

भीमसेन ने कहा–सम्पूर्ण विश्वका प्रत्येक रूप भगवान्का ही रूप है, फिर भी उन्होंने वराहका विशेष रूप धारण कर चर और अचरसहित जलराशिमें डूबी हुई सम्पूर्ण पृथ्वीको अपने दाढ़के अग्रभागसे निकालकर अपनी कक्षामें स्थापित किया था, वे स्वयम्भू भगवान् मुझपर प्रसन्न हों॥६॥

अर्जुन उवाच ।

अचिन्त्यमव्यक्तमनन्तमव्ययं विभुं प्रभुं भावितविश्वभावनम् ।
त्रैलोक्यविस्तारविचारकारकं हरिं प्रपन्नोऽस्मि गतिं महात्मनाम् ॥ ७॥

अर्जुन ने कहा – मैं हरिकी शरणमें हूँ। वे हरि अचिन्त्य हैं, अव्यक्त हैं, अनन्त हैं, अव्यय हैं, व्यापक हैं, प्रभु हैं, विश्वको उत्पन्न कर उसका संरक्षण – पालन करते हैं, तीनों लोकोंके विस्तारके लिये विचार किया करते हैं और वे ही भगवान् महापुरुषोंके आश्रय हैं॥७॥

नकुल उवाच ।
यदि गमनमधस्तात् कालपाशानुबन्धाद्
यदि च कुलविहीने जायते पक्षिकीटे ।
कृमिशतमपि गत्वा ध्यायते चान्तरात्मा
मम भवतु हृदिस्था केशवे भक्तिरेका ॥ ८॥

नकुल ने कहा – कालके जालमें बँधकर मेरी अन्तरात्मा (जरायुज आदि ऊँची योनिकी अपेक्षा अण्डज आदि) नीची तथा कुलविहीन पक्षी, कीट आदि योनिमें उत्पन्न हो अथवा सैकड़ों कीड़ेकी योनिमें उत्पन्न हो तो भी हृदयमें स्थित भगवान् केशवके प्रति मेरी एकनिष्ठ भक्ति बनी रहे॥८॥

सहदेव उवाच ।

तस्य यज्ञवराहस्य विष्णोरतुलतेजसः ।
प्रणामं ये प्रकुर्वन्ति तेषामपि नमो नमः ॥९॥

सहदेव ने कहा – जो लोग असीम तेजस्वी भगवान् विष्णुके यज्ञरूप वराहावतारको प्रणाम करते हैं, वराहावतारके साथ ही उन प्रणाम करनेवालों को भी मेरा बार – बार प्रणाम है॥९॥

कुन्ती उवाच ।

स्वकर्मफलनिर्दिष्टां यां यां योनिं व्रजाम्यहम् ।
तस्यां तस्यां हृषीकेश त्वयि भक्तिर्दृढाऽस्तु मे ॥ १०॥

कुन्ती ने कहा है हृषीकेशभगवान्! अपने कर्मके फलके अधीन होकर जिस – जिस योनिमें मैं जन्म लें, उस – उस योनिमें मेरी भक्ति आपमें बनी रहे॥१०॥

माद्री उवाच ।

कृष्णे रताः कृष्णमनुस्मरन्ति रात्रौ च कृष्णं पुनरुत्थिता ये ।
ते भिन्नदेहाः प्रविशन्ति कृष्णे हविर्यथा मन्त्रहुतं हुताशे ॥ ११॥

माद्री ने कहा – जो लोग कृष्णमें अनुरक्त हैं, वे निरन्तर कृष्णका स्मरण करते रहते हैं, रातमें (सो जानेके बाद मनके पुरीतत् नाड़ीमें चले जानेपर स्मरणकी यह निरन्तरता नहीं रह जाती। फिर भी) जब – जब उठते हैं, तब – तब भगवान् का स्मरण करते रहते हैं। ऐसे

निरन्तर निरत भगवान्के भक्त देहके नष्ट हो जानेपर भगवान् कृष्णमें उसी तरह मिल जाते हैं, जैसे मन्त्रद्वारा प्रदत्त आहुति अग्निमें मिल जाती है॥११॥

द्रौपदी उवाच ।

कीटेषु पक्षिषु मृगेषु सरीसृपेषु रक्षःपिशाचमनुजेष्वपि यत्र यत्र ।
जातस्य मे भवतु केशव त्वत्प्रसादात् त्वय्येव
भक्तिरचलाऽव्यभिचारिणी च ॥ १२॥

द्रौपदी ने कहा – हे केशव! कीड़े, पक्षी, पशु तथा सरककर चलनेवाले साँप आदिकी योनि और राक्षस, पिशाच एवं मनुष्य आदि जिस – जिस योनिमें मैं उत्पन्न होऊँ, उन सभी योनियोंमें आपकी कृपासे आपमें मेरी अचल और अनन्य भक्ति बनी रहे॥१२॥

सुभद्रा उवाच ।

एकोऽपि कृष्णस्य कृतः प्रणामो दशाश्वमेधावभृथेन तुल्यः ।
दशाश्वमेधी पुनरेति जन्म कृष्णप्रणामी न पुनर्भवाय ॥ १३॥

सुभद्रा ने कहा – भगवान् श्रीकृष्णके लिये किया गया एक बारका भी प्रणाम देस अश्वमेधयज्ञके अनुष्ठानकी समाप्तिपर किये जानेवाले अवभृथ – स्नानके बराबर (फलप्रद) है। सच पूछा जाय तो एक बार किया गया यह प्रणाम दस अश्वमेधयज्ञसे भी बढ़कर होता है; क्योंकि

दस अश्वमेध करनेवाला व्यक्ति फिरसे जन्म ग्रहण करता है, किंतु भगवान् श्रीकृष्णको प्रणाम करनेवाला फिर जन्म ग्रहण नहीं करता अर्थात् मुक्त हो जाता हैं॥१३॥

अभिमन्युरुवाच ।

गोविन्द गोविन्द हरे मुरारे गोविन्द गोविन्द मुकुन्द कृष्ण
गोविन्द गोविन्द रथाङ्गपाणे । गोविन्द गोविन्द नमामि नित्यम् ॥
१४॥

अभिमन्यु ने कहा – हे गोविन्द! हे गोविन्द ! है हरे! हे मुरारे! हे गोविन्द! हे गोविन्द ! हे मुकुन्द! हे कृष्ण! हे गोविन्द हे गोविन्द! हे रथाङ्गपाणे! हे गोविन्द ! हे गोविन्द! आपको बार – बार नमस्कार है॥१४॥

धृष्टद्युम्न उवाच ।

श्रीराम नारायण वासुदेव गोविन्द वैकुण्ठ मुकुन्द कृष्ण ।
श्रीकेशवानन्त नृसिंह विष्णो मां त्राहि संसारभुजङ्गदष्टम् ॥ १५॥

धृष्टद्युम ने कहा – हे श्रीराम! हे नारायण! हे वासुदेव! हे गोविन्द! हे वैकुण्ठ! हे मुकुन्द ! हे कृष्ण! हे श्रीकेशव! हे अनन्त? हे नृसिंह! हे विष्णो! संसाररूपी सर्पने मुझे डंस लिया है, आप मुझे बचाइये॥१५॥

सात्यकिरुवाच ।

अप्रमेय हरे विष्णो कृष्ण दामोदराऽच्युत ।
गोविन्दानन्त सर्वेश वासुदेव नमोऽस्तु ते ॥ १६॥

सात्यकि ने कहा – हे अप्रमेय! हे हरे! हे विष्णो! हे कृष्ण! हे दामोदर! है अच्युत! हे गोविन्द! हे अनन्त! हे सर्वेश! हे वासुदेव! आपको नमस्कार है॥१६॥

उद्धव उवाच ।

वासुदेवं परित्यज्य योऽन्यं देवमुपासते ।
तृषितो जाह्नवीतीरे कूपं खनति दुर्मतिः ॥ १७॥

उद्धव ने कहा – साक्षात् परब्रह्म वासुदेवको छोड़कर जो अन्य देवताकी उपासना करता है, वह उस प्यासेके समान है, जिसकी समझनेकी शक्ति कम है, जिसके कारण गङ्गाके तटपर रहकर भी प्यास बुझानेके लिये वह कुएँकी ओर दौड़ता है। (इन्द्र आदि देवता भगवान् श्रीकृष्णके ही अंशांश हैं और प्रकृतिको परिधिके भीतर हैं। ये प्राकृतिक सुख – शान्ति ही प्रदान कर सकते हैं, आत्मिक नहीं)॥१७॥

धौम्य उवाच ।

अपां समीपे शयनासनस्थिते दिवा च रात्रौ च यथाधिगच्छता ।
यद्यस्ति किञ्चित् सुकृतं कृतं मया जनार्दनस्तेन कृतेन तुष्यतु ॥ १८॥

धौम्य ने कहा – जलके समीपमें, शय्यापर अथवा आसनपर स्थित होकर दिन या रात्रिमें अथवा चलते – फिरते जो कुछ मैंने पुण्य अर्जित किया है, उस किये गये पुण्यसे भगवान् जनार्दन संतुष्ट हो जायें॥१८॥

सञ्जय उवाच ।

आर्ता विषण्णाः शिथिलाश्च भीता घोरेषु व्याघ्रादिषु वर्तमानाः ।
सङ्कीर्त्य नारायणशब्दमात्रं विमुक्तदुःखाः सुखिनो भवन्ति ॥ १९॥

सञ्जय ने कहा – जो आर्त हैं, दुःखी हैं, शक्तिहीन हैं, भयानक व्याघ्र आदि हिंसक पशुओंके मध्य पड़कर जो भयभीत हो गये हैं, वे लोग 'नारायण' शब्दको उच्चारणमात्र करके दुःखसे मुक्त होकर सुखी हो जाते हैं॥१९॥

अक्रूर उवाच ।

अहं तु नारायणदासदासदासस्य दासस्य च दासदासः ।
अन्यो न हीशो जगतो नराणां तस्मादहं धन्यतरोऽस्मि लोके ॥ २०॥

अक्रूर ने कहा – नारायणके जितने दास हो चुके हैं, उन सब दासोंका मैं दासानुदास हूँ। जगत् और सब मनुष्योंके एकमात्र स्वामी नारायण हैं, इनके अतिरिक्त और कोई स्वामी नहीं है, इसलिये मैं संसारमें दूसरेकी अपेक्षा धन्य हूँ॥२०॥

विराट उवाच ।

वासुदेवस्य ये भक्ताः शान्तास्तद्गतचेतसः ।
तेषां दासस्य दासोऽहं भवेयं जन्मजन्मनि ॥ २१॥

विदुर ने कहा – भगवान् कृष्णके जो भक्त शमगुणसे सम्पन्न हैं और जिन्होंने निरन्तर अपने मनको उनमें लगा रखा है, उन भक्तोंका जो दास है, उस दासका मैं प्रत्येक जन्ममें दास बनें। (ऐसी मेरी अभिलाषा है।)॥२१॥

भीष्म उवाच ।

विपरीतेषु कालेषु परिक्षीणेषु बन्धुषु ।
त्राहि मां कृपया कृष्ण शरणागतवत्सल ॥ २२॥

भीष्म ने कहा हे शरणागतवत्सल कृष्ण! समय विपरीत है, परिवारके लोग कम रह गये हैं, (ऐसी स्थितिमें) कृपा कर आप मेरी रक्षा करें॥२२॥

द्रोण उवाच ।

ये ये हताश्चक्रधरेण दैत्यांस्त्रैलोक्यनाथेन जनार्दनेन ।
ते ते गता विष्णुपुरीं प्रयाताः क्रोधोऽपि देवस्य वरेण तुल्यः ॥ २३॥

द्रोणाचार्य ने कहा – तीनों लोकोंके नाथ चक्रधारी भगवान्के द्वारा जो – जो दैत्य मारे गये, वे सभी – के – सभी भगवान्के धाम (विष्णुपुरी)

– में चले गये। हे राजन् ! भगवान्का क्रोध भी वरदानके समान ही होता है॥२३॥

कृपाचार्य उवाच ।

मज्जन्मनः फलमिदं मधुकैटभारे
मत्प्रार्थनीय मदनुग्रह एष एव ।
त्वद्भृत्यभृत्यपरिचारकभृत्यभृत्यभृत्यस्य
भृत्य इति मां स्मर लोकनाथ ॥ २४॥

कृपाचार्य ने कहा – हे मधु और कैटभ दैत्यको उद्धार करनेवाले भगवान्! मैं आपके अनन्त परिचारकों (सेवकों) – मेंसे किसी एक सेवकका सेवक हूँ। इस रूपमें आप मुझे स्मरण करें तो हे लोकनाथ! मेरे जन्म लेनेका फल मुझे प्राप्त हो जायगा, इतनी ही मेरी प्रार्थना है और इसे ही मैं आपका अनुग्रह मानता हूँ॥२४॥

अश्वत्थाम उवाच ।

गोविन्द केशव जनार्दन वासुदेव विश्वेश विश्व मधुसूदन विश्वरूप ।
श्रीपद्मनाभ पुरुषोत्तम देहि दास्यं नारायणाच्युत नृसिंह नमो नमस्ते
॥ २५॥

अश्वत्थामा ने कहा – हे गोविन्द! हे केशव! हे जनार्दन! हे वासुदेव! हे विश्वेश! हे विश्व! हे मधुसूदन! हे विश्वरूप! हे श्रीपद्मनाभ! हे पुरुषोत्तम! हे नारायण! हे अच्युत! हे। नृसिंह! आप मुझे अपनी दासता प्रदान करें। आपको बार – बार नमस्कार है॥२५॥

कर्ण उवाच ।

नान्यं वदामि न शृणोमि न चिन्तयामि
नान्यं स्मरामि न भजामि न चाश्रयामि ।
भक्त्या त्वदीयचरणाम्बुजमादरेण
श्रीश्रीनिवास पुरुषोत्तम देहि दास्यम् ॥ २६॥

कर्ण ने कहा – हे श्रीश्रीनिवास! आपमें भक्ति होनेके कारण आपके चरणकमलको छोड़कर मैं अन्य कुछ न कहता हूँ, न सुनता हैं, न सोचता हूँ, न किसी अन्य देवताका स्मरण करता हूँ, न भजन करता हूँ और न आश्रय ही ग्रहण करता हूँ। (इसलिये) हे पुरुषोत्तम! आप मुझे अपनी दासता प्रदान करें॥२६॥

धृतराष्ट्र उवाच ।

नमो नमः कारणवामनाय नारायणायामितविक्रमाय ।
श्रीशार्ङ्गचक्रासिगदाधराय नमोऽस्तु तस्मै पुरुषोत्तमाय ॥ २७॥

धृतराष्ट्र ने कहा – असीम पराक्रमसम्पन्न होनेपर भी भक्तोंके हितके लिये वामनस्वरूप धारण करनेवाले नारायणको बार – बार नमस्कार है। भगवती लक्ष्मीको वामभागमें तथा शाई धनुष, चक्र, कमल और गदाको धारण करनेवाले में उन पुरुषोत्तम भगवान्को नमस्कार है॥२७॥

गान्धारी उवाच ।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव त्वमेव सर्वं मम देव देव ॥ २८॥

गान्धारी ने कहा – हे देवदेव! आप ही मेरी माता हैं, आप ही मेरे पिता हैं, आप ही मेरे बन्धु तथा आप ही मेरे सखा हैं, आप ही मेरी विद्या और आप ही मेरे धन हैं, इस तरह आप ही मेरे सब कुछ हैं॥२८॥

द्रुपद उवाच ।

यज्ञेशाच्युत गोविन्द माधवानन्त केशव ।
कृष्ण विष्णो हृषीकेश वासुदेव नमोऽस्तु ते ॥ २९॥

द्रुपद ने कहा – हे यज्ञेश! हे अच्युत! हे गोविन्द! हे माधव! हे अनन्त! हे केशव! है। कृष्ण! हे विष्णो! हे हृषीकेश! हे वासुदेव! आपको मेरा नमस्कार है॥२९॥

जयद्रथ उवाच ।

नमः कृष्णाय देवाय ब्रह्मणेऽनन्तशक्तये ।
योगेश्वराय योगाय त्वामहं शरणं गतः ॥ ३०॥

जयद्रथ ने कहा – हे अनन्त मूर्तिवाले ब्रह्मदेव भगवान् श्रीकृष्ण! आपको नमस्कार है। योगकी मूर्ति हे योगेश्वर! आपको मेरा नमस्कार है। मैं आपकी शरणमें हूँ॥३०॥

विकर्ण उवाच ।

कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनन्दनाय च ।
नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमो नमः ॥ ३१॥

विकर्ण ने कहा – हे देवकीको आनन्दित करनेवाले वासुदेव श्रीकृष्ण तथा हे नन्दगोपकुमार गोविन्द! आपको बार – बार नमस्कार है॥३१॥

विराट उवाच ।

नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ।
जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ ३२॥

विराट ने कहा – ब्राह्मणोंके हितैषी, गौ और ब्राह्मणका कल्याण करनेवाले भगवान्को नमस्कार है। जगत्का हित करनेवाले कृष्ण गोविन्दको बार – बार नमस्कार है॥३३॥

शल्य उवाच ।

अतसीपुष्पसङ्काशं पीतवाससमच्युतम् ।
ये नमस्यन्ति गोविन्दं तेषां न विद्यते भयम् ॥ ३३॥

शल्य ने कहा – तीसीके फूलको अभावाले, पीताम्बर धारण किये हुए, अच्युत और गोविन्द नामवाले भगवान्को जो नमस्कार करते हैं, उनको कोई भय नहीं होता॥३४॥

बलभद्र उवाच ।

कृष्ण कृष्ण कृपालो त्वमगतीनां गतिर्भव ।
संसारार्णवमग्नानां प्रसीद पुरुषोत्तम ॥ ३४॥

बलभद्र ने कहा – हे कृष्ण! आप अत्यन्त दयालु हैं, (अत:) आप असहायोंके सहायक बन जाइये । हे पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण! संसाररूपी समुद्रमें डूबनेवालोंपर आप प्रसन्न हो जाइये॥३५॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

कृष्ण कृष्णेति कृष्णेति यो मां स्मरति नित्यशः ।
जलं भित्वा यथा पद्मं नरकादुद्धराम्यहम् ॥ ३५॥

नित्यं वदामि मनुजाः स्वयमूर्ध्वबाहुर्यो मां मुकुन्द नरसिंह जनार्दनेति ।
जीवो जपत्यनुदिनं मरणे रणे वा पाषाणकाष्ठसदृशाय ददाम्यभीष्टम् ॥ ३६॥

श्रीकृष्ण ने [स्वयं] कहा – 'जो निरन्तर 'कृष्ण', 'कृष्ण', 'कृष्ण' कहकर मेरा स्मरण करता रहता है, उसको नरकसे मैं उसी तरह निकाल लेता हूँ, जैसे जल फोड़कर कमल निकल आता है। हे मनुष्यो! मैं स्वयं ऊपर भुजा उठाकर सदा कहा करता हूँ कि जो जीव मुझे प्रतिदिन मरण – कालमें या रणकी स्थितिमें है, उस व्यक्तिको मैं उसकी अभीष्ट वस्तु दे देता हूँ। भले ही उसका हृदय पत्थर या काठकी तरह कठोर हो'॥३६ – ३७॥

ईश्वर उवाच ।

सकृन्नारायणेत्युक्त्वा पुमान् कल्पशतत्रयम् ।
गङ्गादिसर्वतीर्थेषु स्नातो भवति पुत्रक ॥ ३७॥

ईश्वर ने [स्वयं] कहा – हे पुत्र! जो मनुष्य एक बार 'नारायण' कह देता है, वह तीन सौ कल्पपर्यन्त गङ्गा आदि सभी तीर्थों में नहानेको फल पा लेता है॥३८॥

सूत उवाच ।

तत्रैव गङ्गा यमुना च तत्र गोदावरी सिन्धु सरस्वती च ।
सर्वाणि तीर्थानि वसन्ति तत्र यत्राच्युतोदार कथाप्रसङ्गः ॥ ३८॥

सूतजी ने कहा – जहाँ भगवान्की श्रेष्ठ कथा होती है, वहीं गङ्गा, यमुना, गोदावरी, सिन्ध और सरस्वती आदि सभी तीर्थ बसते हे॥३९॥

यम उवाच ।

नरके पच्यमानं तु यमेनं परिभाषितम् ।
किं त्वया नार्चितो देवः केशवः क्लेशनाशनः ॥ ३५॥

यम ने कहा – नरकमें कष्ट झेलते हुए जीवसे यम कहते हैं – क्या तुमने क्लेशके नाश करनेवाले भगवान् केशवका पूजन नहीं किया?४०॥

नारद उवाच ।

जन्मान्तरसहस्रेण तपोध्यानसमाधिना ।
नराणां क्षीणपापानां कृष्णे भक्तिः प्रजायते ॥ ४०॥

नारदजी ने कहा – हजारों जन्मोंके किये हुए तप, ध्यान और समाधिके द्वारा क्षीण पापवाले मनुष्योंकी भक्ति कृष्णमें उत्पन्न होती है॥४१॥

प्रह्लाद उवाच ।

नाथ योनिसहस्रेषु येषु येषु व्रजाम्यहम् ।
तेषु तेष्वचला भक्तिरच्युताऽस्तु सदा त्वयि ॥ ४१॥

या प्रीतिरविवेकनां विषयेष्वनपायिनि ।
त्वामनुस्मरतः सा मे हृदयान्माऽपसर्पतु ॥ ४२॥

प्रह्लादजी ने कहा – 'हे स्वामिन् ! जिन – जिन हजारों योनियोंमें मैं जाऊँ, उन – उन योनियोंमें है अच्युत! आपमें मेरी अचल भक्ति बनी

रहे। 'विवेकरहित मनुष्योंकी रूप, रस आदि विषयोंमें जैसी अडिग प्रीति बनी रहती है, वैसी ही प्रीति आपके स्मरणमें मेरी बनी रहे। वह प्रीति आपके नामको निरन्तर स्मरण करनेसे मेरे हृदयसे कभी दूर न हो'॥४२ – ४३॥

विश्वामित्र उवाच ।

किं तस्य दानैः किं तीर्थैः किं तपोभिः किमध्वरैः ।
यो नित्यं ध्यायते देवं नारायणमनन्यधीः ॥ ४३॥

विश्वामित्र ने कहा – जो व्यक्ति एकतानताके साथ नित्य ही भगवान् नारायणका ध्यान करता है, उस व्यक्तिके लिये दान, तीर्थ, तप और यज्ञोंसे क्या लाभ? (अर्थात् एकनिष्ठ ध्यानसे यज्ञ, तप आदिका फल स्वयं प्राप्त हो जाता है)॥४४॥

जमदग्निरुवाच ।

नित्योत्सवो भवेत्तेषां नित्यं नित्यं च मङ्गलम् ।
येषां हृदिस्थो भगवान्मङ्गलायतनं हरिः ॥ ४४॥

जमदग्नि ने कहा – जिनके हृदयमें के मङ्गलायतन भगवान् हरि विद्यमान हैं, उनके लिये सदा उत्सव है – नित्य मङ्गल है॥४५॥

भरद्वाज उवाच ।

लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः ।
येषामिन्दीश्वरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥ ४५॥

भरद्वाजजी ने कहा – जिनके हृदयमें नील कमलके समान श्याम वर्णवाले जनार्दन स्थित हैं, उनको सदा लाभ ही है और सदा विजय है। उनकी पराजय कहाँ?॥४६॥

गौतम उवाच ।

गोकोटिदानं ग्रहणेषु काशीप्रयागगङ्गायुतकल्पवासः ।
यज्ञायुतं मेरुसुवर्णदानं गोविन्दनामस्मरणेन तुल्यम् ॥ ४६॥

गौतमजी ने कहा – करोड़ गौऑको दान, ग्रहणमें काशीका स्नान, प्रयागमें गङ्गातटपर दस हजार कल्पपर्यन्त वास करना, दस हजार यज्ञ करना और मेरु पर्वतके बराबर स्वर्णका दान 'करन – ये सभी 'गोविन्द' नामकै एक बार स्मरणके समान हैं॥४७॥

अग्निरुवाच ।

गोविन्देति सदा स्नानं गोविन्देति सदा जपः ।
गोविन्देति सदा ध्यानं सदा गोविन्दकीर्तनम् ॥ ४७॥

त्र्यक्षरं परमं ब्रह्म गोविन्द त्र्यक्षरं परम् ।
तस्मादुच्चारितं येन ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ ४८॥

अत्रि ने कहा – 'गोविन्दका उच्चारण सदा सान है, गोविन्द नामका उच्चारण ही सदा जप है और गोविन्द नामका उच्चारण ही सदा ध्यान है। गोविन्दके तीन अक्षर परम ब्रह्मरूप हैं। इसलिये जिसने

गोविन्दरूप – इन तीन अक्षरोंका उच्चारण किया, वह ब्रह्ममें लीन हो जाता है’॥४८ – ४९॥

वेदव्यास उवाच ।

अच्युतः कल्पवृक्षोऽसावनन्तः कामधेनु वै ।
चिन्तामणिस्तु गोविन्दो हरेर्नाम विचिन्तयेत् ॥ ४९॥

शुकदेवजी ने कहा – ‘अच्युत’ नाम कल्पतरु है, ‘अनन्त’ नाम अनन्त कामधेनु है। और ‘गोविन्द’ नाम चिन्तामणि है। इसलिये हरिके नामका चिन्तन करना चाहिये॥५०॥

इन्द्र उवाच ।

जयतु जयतु देवो देवकीनन्दनोऽयं जयतु जयतु कृष्णो
वृष्णिवंशप्रदीपः ।
जयतु जयतु मेघश्यामलः कोमलाङ्गो जयतु जयतु पृथ्वीभारनाशो
मुकुन्दः ॥ ५०॥

हरि(इन्द्र ने कहा – देवकीको आनन्दित करनेवाले इन देवकी जय हो, जय हो। यदुवंशको प्रकाशित करनेवाले कृष्णकी जय हो, जय हो। मेघके समान श्याम वर्णवाले और कोमल अङ्गोंवालेकी जय हो, जय हो। पृथ्वीके भारको उतारनेवाले मुकुन्दकी जय हो, जय हो॥५१॥

पिप्पलायन उवाच ।

श्रीमन्नृसिंहविभवे गरुडध्वजाय तापत्रयोपशमनाय भवौषधाय ।
कृष्णाय वृश्चिकजलाग्निभुजङ्गरोगक्लेशव्ययाय हरये गुरवे नमस्ते ॥ ५१॥

पिप्पलायन ने कहा – श्रीसे सम्बन्धित नृसिंहरूप प्रभुको नमस्कार है। जिनकी ध्वजामें गरुडजी विराजमान हैं, उनको नमस्कार है। आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक – इन तीनों तापोंको दूर करनेवाले, संसारके औषधस्वरूप भगवान् कृष्णको नमस्कार है। बिच्छू, जल, अग्नि, साँप, रोग और क्लेशको दूर करनेवाले भगवान्को नमस्कार है। हरिरूप गुरुको नमस्कार है॥५२॥

आविर्होत्र उवाच ।

कृष्ण त्वदीयपदपङ्कजपञ्जरान्ते अद्यैव मे विशतु मानसराजहंसः ।
प्राणप्रयाणसमये कफवातपित्तैः कण्ठावरोधनविधौ स्मरणं कुतस्ते ॥ ५२॥

हविर्होत्र ने कहा – हे कृष्ण! आपके चरण कमलरूपी पिंजड़े में मेरा मनरूपी राजहंस आज ही प्रवेश कर जाय; क्योंकि शरीरसे प्राण निकलते समय कण्ठ कफ, वात और पित्तसे अवरुद्ध हो जाता है, उस अवसरपर आपका स्मरण कैसे हो सकता है?॥५३॥

विदुर उवाच ।

हरेर्नामैव नामैव नामैव मम जीवनम् ।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा ॥ ५३॥

विदुर ने कहा – हरिका नाम ही मेरा जीवन है। कलियुगमें नामके अतिरिक्त और कोई गति है ही नहीं॥५४॥

वसिष्ठ उवाच ।

कृष्णेति मङ्गलं नाम यस्य वाचि प्रवर्तते ।
भस्मीभवन्ति तस्याशु महापातककोटयः ॥ ५४॥

वसिष्ठ ने कहा – जिसकी वाणीसे मङ्गलमय कृष्णका नाम उच्चरित होता रहता है, उसके करोड़ों महापातक शीघ्र ही जल जाते हैं॥५५॥

अरुन्धत्युवाच ।

कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने ।
प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ ५५॥

अरुन्धती ने कहा – शरणागतोंके कष्टका नाश करनेवाले गोविन्द तथा वासुदेव श्रीकृष्ण एवं परमात्मा श्रीहरिको बार – बार नमस्कार है॥५६॥

कश्यप उवाच ।

कृष्णानुस्मरणादेव पापसङ्घट्टपञ्जरम् ।
शतधा भेदमाप्नोति गिरिर्वज्रहतो यथा ॥ ५६॥

कश्यप ने कहा – भगवान् श्रीकृष्णका प्रतिदिन स्मरण करनेसे पाप – समूहका पंजर सौ टुकड़ों में वैसे ही विदीर्ण हो जाता है, जैसे वज्रका मारा हुआ पर्वत॥५७॥

दुर्योधन उवाच ।

जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिर्जानामि पापं न च मे निवृत्तिः ।
केनापि देवेन हृदि स्थितेन यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि ॥ ५७॥

यन्त्रस्य मम दोषेण क्षम्यतां मधुसूदन ।
अहं यन्त्रं भवान् यन्त्री मम दोषो न दीयताम् ॥ ५८॥

दुर्योधन ने कहा – 'मैं धर्मको जानता हूँ, किंतु इसमें मेरी प्रवृत्ति नहीं होती। इसी तरह पापको भी जानता हूँ, किंतु उससे मेरी निवृत्ति नहीं होती। हृदयमें बैठा हुआ कोई देव जैसी प्रेरणा देता है, वैसे ही करता हूँ। हे मधुसूदन! मैं यन्त्र हूँ और आप यन्त्री (यन्त्रके प्रेरक) हैं। इसलिये यन्त्ररूप मेरे दोषसे आप शान्त हों। मुझे दोष न दें; क्योंकि यन्त्रकी सभी क्रियाएँ। उसके प्रेरकके अधीन होती हैं'॥५८ – ५९॥

भृगुरुवाच ।

नामैव तव गोविन्द नाम त्वत्तः शताधिकम् ।
ददात्युच्चारणान्मुक्तिः भवानष्टाङ्गयोगतः ॥ ५९॥

भृगु ने कहा – हे गोविन्द! आपका नाम आपसे सौ गुना बड़ा है; क्योंकि वह उच्चारणमात्रसे मुक्ति प्रदान करता है और आप अष्टाङ्गयोगकी साधनासे मुक्ति देते हैं॥६०॥

लोमश उवाच ।
नमामि नारायण पादपङ्कजं करोमि नारायणपूजनं सदा ।
वदामि नारायणनाम निर्मलं स्मरामि नारायणतत्त्वमव्ययम् ॥ ६०॥

लोमश ने कहा – मैं नारायणके चरण कमलको नमस्कार करता रहता हूँ, नारायणका पूजन करता रहता हूँ, सदा नारायणके निर्मल नामका उच्चारण करता रहता हूँ और अविनाशी नारायणरूपी तत्त्वका स्मरण करता रहता हूँ॥६१॥

शौनक उवाच ।

स्मृतेः सकलकल्याणं भजनं यस्य जायते ।
पुरुषं तमजं नित्यं व्रजामि शरणं हरिम् ॥ ६१॥

शौनक ने कहा – जिनका स्मरण करनेपर मनुष्य समस्त कल्याणोंका पात्र हो जाता है, मैं जन्मरहित उन नित्य पुरुष हरिकी शरण ग्रहण करता हूँ॥६२॥

गर्ग उवाच ।

नारायणेति मन्त्रोऽस्ति वागस्ति वशवर्तिनी ।
तथापि नरके घोरे पतन्तीत्यद्भुतं महत् ॥ ६२॥

गर्गजी ने कहा – 'नारायण' यह मन्त्र विद्यमान है और वाणी वशमें है, इसके बाद भी मनुष्य घोर नरकमें पड़ते हैं, यह बहुत बड़ा आश्चर्य है॥६३॥

दाल्भ्य उवाच ।

किं तस्य बहुभिर्मन्त्रैर्भक्तिर्यस्य जनार्दने ।
नमो नारायणायेति मन्त्रः सर्वार्थसाधके ॥ ६३॥

दाल्भ्य ने कहा – जिस व्यक्तिकी भगवान् जनार्दनमें भक्ति हो गयी है, उसको बहुत – से मन्त्रोंसे क्या प्रयोजन है; क्योंकि 'नमो नारायणाय' यही मन्त्र सभी प्रयोजनोंको सिद्ध करनेवाला है॥६४॥

वैशम्पायन उवाच ।

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः ।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम ॥ ६४॥

वैशम्पायन ने कहा – जहाँ योगेश्वर भगवान् श्रीकृष्ण हैं और जहाँ धनुर्धारी अर्जुन हैं, वहाँ ही श्री, विजय, विभूति और अचल नीति है – ऐसा मेरा मत है॥६५॥

अग्निरुवाच ।

हरिर्हरति पापानि दुष्टचित्तैरपि स्मृतः ।
अनिच्छयापि संस्पृष्टो दहत्येव हि पावकः ॥ ६५॥

अग्नि ने कहा – ईर्ष्या आदि दोषोंसे ग्रस्त चित्तके द्वारा भी स्मरण किये गये भगवान् हरि पापोंको वैसे ही हर लेते हैं, जैसे अनिच्छासे भी संस्पृष्ट (स्पर्श की गयी) अग्नि जला ही देती है। ६६॥

परमेश्वर उवाच ।

सकृदुच्चरितं येन हरिरित्यक्षरद्वयम् ।
लब्धः परिकरस्तेन मोक्षाय गमनं प्रति ॥ ६६॥

पराशर ने कहा – जिस व्यक्तिने 'हरि' इन दो अक्षरोंका एक बार भी उच्चारण कर लिया, उसने निश्चय ही मोक्ष – प्राप्तिके लिये कमर कस ली॥६७॥

पुलस्त्य उवाच ।

हे जिह्वे रससारज्ञे सर्वदा मधुरप्रिये ।
नारायणाख्यपीयूषं पिब जिह्वे निरन्तरम् ॥ ६७॥

पुलस्त्य ने कहा – हे रसने! तुम सर्वदा मीठे रसकी चाह करनेवाली तथा रसके सारतत्त्वको जाननेवाली हो, अतः हे जिह्वे ! 'नारायण' नामरूपी अमृत – रसका तुम निरन्तर पान किया कर॥६८॥

व्यास उवाच ।

सत्यं सत्यं पुनः सत्यं सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ।
नास्ति वेदात्परं शास्त्रं न देवः केशवात्परः ॥ ६८॥

व्यासजी ने कहा – मैं इस सत्यको बार बार कहता हूँ कि वेदसे बढ़कर कोई शास्त्र नहीं है और केशवसे बढ़कर कोई देवता नहीं है॥६९॥

धन्वन्तरिरुवाच ।

अच्युतानन्त गोविन्द नामोच्चारणभेषजात् ।
नश्यन्ति सकला रोगाः सत्यं सत्यं वदाम्यहम् ॥ ६९॥

धन्वन्तरि ने कहा – अच्युत, अनन्त और गोविन्द – ये तीनों नाम औषधिका फल देते हैं। इनको उच्चारण करनेसे सभी रोग नष्ट हो जाते हैं, यह बात मैं सत्य – सत्य कहता हूँ॥७०॥

मार्कण्डेय उवाच ।

स्वर्गदं मोक्षदं देवं सुखदं जगतो गुरुम् ।
कथं मुहुर्तमपि तं वासुदेवं न चिन्तयेत् ॥ ७०॥

मार्कण्डेय ने कहा – भगवान् वासुदेव स्वर्ग, मोक्ष और सुखको देनेवाले तथा जगत्के गुरु हैं। उनका क्षणमात्र भी चिन्तन क्यों न किया जाय?॥७१॥

अगस्त्य उवाच ।

निमिषं निमिषार्धं वा प्राणिनां विष्णुचिन्तनम् ।
तत्र तत्र कुरुक्षेत्रं प्रयागो नैमिषं वरम् ॥ ७१॥

अगस्त्यजी ने कहा – प्राणियोंके द्वारा पलभर या आधा पल भी जहाँ विष्णुका चिन्तन होता है, वहीं कुरुक्षेत्र, प्रयाग तथा नैमिषारण्य है॥७२॥

वामदेव उवाच ।

निमिषं निमिषार्धं वा प्राणिनां विष्णुचिन्तनम् ।
कल्पकोटिसहस्राणि लभते वाञ्छितं फलम् ॥ ७२॥

वामदेवजी ने कहा – प्राणियोंके द्वारा पलभर या आधी पल भी यदि विष्णुका चिन्तन किया जाय तो उससे करोड़ – करोड़ कल्पतक वाञ्छित फल प्राप्त होता रहता है॥७३॥

शुक उवाच ।

आलोड्य सर्वशास्त्राणि विचार्य च पुनः पुनः ।

इदमेकं सुनिष्पन्नं ध्येयो नारायणः सदा ॥ ७३॥

शुकदेवजी ने कहा – समस्त शास्त्रोंका आलौडन कर और बार – बार विचार करनेपर इस एक बातकी सिद्धि हुई है कि नारायण ही सदा ध्येय हैं, इनका निरन्तर स्मरण करते रहना चाहिये॥७४॥

श्रीमहादेव उवाच ।
शरीरे जर्जरीभूते व्याधिग्रस्ते कलेवरे ।
औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः ॥ ७४॥

श्रीमहादेवजी ने कहा – शरीरके जीर्ण हो जानेपर और रोगोंके घेर लेनेपर गङ्गाजल ही औषधि है और नारायण ही वैद्य हैं॥७५॥

शौनक उवाच ।

भोजनाच्छादने चिन्तां वृथा कुर्वन्ति वैष्णवाः ।
योऽसौ विश्वम्भरो देवः स किं भक्तानुपेक्षते ॥ ७५॥

शौनकजी ने कहा – विष्णुके भक्त जो भोजन और आच्छादनकी चिन्ता करते हैं, वह व्यर्थ है; क्योंकि जो संसारका पालन कर रहा है, वह भक्तोंकी उपेक्षा कैसे करेगा?॥७६॥

सनत्कुमार उवाच ।

यस्य हस्ते गदा चक्रं गरुडो यस्य वाहनम् ।

शङ्खचक्रगदापद्मी स मे विष्णुः प्रसीदतु ॥ ७६॥

सनत्कुमारजी ने कहा – जिनके हाथमें गदा और चक्र है तथा गरुड़ जिनका वाहन हैं, शङ्ख, चक्र, गदा एवं पद्म धारण करनेवाले वे विष्णु मुझपर प्रसन्न हों॥७७॥

एवं ब्रह्मादयो देवा ऋषयश्च तपोधनाः ।
कीर्तयन्ति सुरश्रेष्ठमेवं नारायणं विभुम् ॥ ७७॥

ब्रह्मा आदि देवता तथा ऋषि, तपस्वी इस तरह देवताओंमें श्रेष्ठ भगवान् नारायणको कीर्तन किया करते हैं॥७८॥

इदं पवित्रमायुष्यं पुण्यं पापप्रणाशनम् ।
दुःस्वप्ननाशनं स्तोत्रं पाण्डवैः परिकीर्तितम् ॥ ७८॥

यह स्तोत्र पवित्र, आयुको बढ़ानेवाला, पुण्यप्रद और पापका नाश करनेवाला है। इससे दुःस्वप्न भी नष्ट हो जाता है। इस स्तोत्रको पाण्डवों ने कहा है॥७९॥

यः पठेत्प्रातरुत्थाय शुचिस्तद्गतमानसः ।
गवां शतसहस्रस्य सम्यग्दत्तस्य यत्फलम् ॥ ७९॥

तत्फलं समवाप्नोति यः पठेदिति संस्तवम् ।
सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ ८०॥

जो व्यक्ति प्रात:काल उठकर तथा पवित्र होकर और मन लगाकर इस स्तोत्रका पाठ करता है, वह अच्छी प्रकार दानमें दी हुई लाख गौओंका फल प्राप्त करता है। इस स्तोत्रके पाठसे सभी पापोंसे छुटकारा मिल जाता है और पाठ करनेवाला विष्णुलोकको प्राप्त करता हैं॥८० – ८१॥

गङ्गा गीता च गायत्री गोविन्दो गरुडध्वजः ।
गकारैः पञ्चभिर्युक्तः पुनर्जन्म न विद्यते ॥ ८१॥

गङ्गा, गीता, गायत्री और गरुडध्वज गोविन्द – इन चार गकारोंका जो उच्चारण करता है, उसका पुनर्जन्म नहीं होता अर्थात् वह मुक्त हो जाता है॥८२॥

गीतां यः पठते नित्यं श्लोकार्धं श्लोकमेव वा ।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ ८२॥

जो व्यक्ति नित्य इस पाण्डव गीताका पाठ करता है अथवा इसके एक श्लोक या आधे श्लोकका भी पाठ करता है, वह सभी पापोंसे मुक्त होकर विष्णुलोकको प्राप्त करता है॥८३॥

॥ इति पाण्डव गीता समाप्ता॥

॥ ॐ तत्सत् ॥